ला० मैय्यादास जी सेठी, दुकानदार रावलपिंडी ने वर्णन किया 'स्वामी जी के यहां पधारने से पहले ही ब्राह्मणों ने प्रसिद्ध कर दिया था कि वह लोगों को ईसाई कर रहा है और ईसाइयों का नौकर है, कोई सुनने मत जाये। जब स्वामी जी ने आकर सवां नदी के पुल के ऊपर दायीं ओर अन्त में जो जामास्पजी की कोठी है, वहां निवास किया तो बाबू गिरीशचन्द्र, हेड क्लर्क जिला ने स्वामी जी का स्वागत करके उनको उतारा था। उनके आने पर बाबू गिरीशचन्द्र जी ने अपने हाथ से लिखकर विज्ञापन लगवाये थे। उनके पहले व्याख्यान से ही नगर में हल्ला मच गया था, क्योंकि उन्होंने उसमें ही बड़ी प्रबल युक्तियों से मूर्तिपूजा का खंडन किया था। बाजार में ब्राह्मण कहते थे कि यद्यपि कपड़े तो भगवे पहने हुए हैं परन्तु आकृति ईसाइयों की छिपी नहीं; चलकर देख लो हुक्का पीते थे, लोगों ने कहा कि यह

उपाधि क्यों डाल रखी है? स्वामी जी ने कहा कि कफ की निवृत्ति के लिए पीता हूं। पहले पहल चार सौ के लगभग मनुष्य आया करते थे, तत्पश्चात् दो सौ के लगभग जाते रहे। जब वे कोई शब्द मूर्ति के विषय में कहते तो लोग कहते थे कि देखो किरानी इससे बढ़कर और क्या कहते है।

यहां प्रतिदिन व्याख्यान होता रहा फिर सरदार सुजानसिंह के बाग की पुरानी बारहदरी में चले गये। यहां दो दिन व्याख्यान और एक दिन छुट्टी। लगभग एक मास यहां रहे।

[illegible] लिया और एक प्रति इन प्रश्नों की आप की मतानुयायी सभाओं में और अमरीका के सज्जनों के पास भेजी जायेगी और देशी और अंग्रेजी पत्रो मे मुद्रित की जायेगी। इन प्रश्नों पर चौदह व्यक्तियों ने हस्ताक्षर किये थे कि जिन के नाम 'भारतसुदशाप्रवर्तक' पत्रिका में लिखे हैं।

विज्ञापन का उत्तर—जो आप लोगों को शास्त्रप्रमाण सहित उत्तर अपेक्षित था, तो इतने पंडितों में से कोई एक भी तो कुछ पंडिताई दिखलाता? आपके तो प्रश्न सब के सब अंडबंड शास्त्रविरुद्ध यहाँ तक कि भाषारीति से भी शुद्ध नही। ऐसों का उत्तर प्रमाण सहित मांगना, मानो गाजरों की तुला देकर तुरन्त विमान की मार्ग-परीक्षा करना है। शास्त्रोक्त उत्तर शास्त्रज्ञों को ही मिलते हैं क्योंकि वे ही इन वचनों को समझ सकते हैं। तुम्हारे सामने शास्त्रोक्त वचन लिखना ऐसा है जैसा कि गंवार मनुष्यों के आगे रत्नों की थैलियाँ खोल देना। वास्तव में तुम्हारा एक भी प्रश्न उत्तर देने के योग्य न था तथापि हमने 'तुष्यतु दुर्जनः' इस न्याय से सब का उत्तर शास्त्रोक्त प्रमाण सहित दिया है। समझा जाये तो समझ लो।

फर्रुखाबाद के पंडितों के प्रश्न और स्वामी जी के उत्तर

पहला प्रश्न—आप्त ग्रन्थों अर्थात् वेदादिक सत्यशास्त्रो के अनुसार परिव्राजकों अर्थात् संन्यासियों के धर्म क्या हैं। वेदों के अनुसार उन को यानों अर्थात् सवारियों पर चढ़ना और धूम्र अर्थात् हुक्का आदि पीना योग्य है या नही?

उत्तर—वेदादि शास्त्रो में विद्वान् होकर वेद और वेदानुकूल सत्य शास्त्रोक्त रीति से पक्षपात, शोक, वैर, अविद्या, हठ, दुराग्रह, स्वार्थसाधन, निन्दास्तुति, मान, अपमान, क्रोधादि दोषो से रहित हो स्वपरीक्षापूर्वक सत्यासत्य निश्चय करके सर्वत्र भ्रमणपूर्वक सर्वथा सत्यग्रहण, असत्य परित्याग से सब मनुष्यों को शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति, आसन के साधन, सत्यविद्या, सनातन धर्म, स्वपुरुषार्थयुक्त करके व्यावहारिक और पारमार्थिक सुखों से वर्तमान (युक्त) करके, दुष्टाचरणों से पृथक् कर देना, संन्यासियों का धर्म है। लाभ में हर्ष, अलाभ में शोकादि से रहित होकर विमानों में बैठना और रोगादि निवारणार्थ औषधिवत् धूम्र अर्थात् हुक्का पीकर परोपकार करने में तत्पर, तिन्हों को कुछ भी दोष नहीं। यह सब शास्त्रों में विधान है परन्तु तुम को वर्तमान वेदादि सत्य शास्त्रों से विमुखता होने के कारण, भ्रम है; सो इन सत्य ग्रन्थों से विमुखता न चाहिए।

स्वामी जी के व्याख्यान की शैली तथा चित्ताकर्षक मंत्रोच्चारण—'स्वामी जी सायं समय व्याख्यान दिया करते थे। व्याख्यान से प्रथम उच्च स्वर से वेदमन्त्रों का गान करते हुए (खड़े होकर) प्रार्थना करते थे। उनका वेदोच्चारण अत्यन्त चित्ताकर्षक हुआ करता था। फिर कुर्सी पर बैठकर 'आर्य्योद्देश्यरत्नमाला' में से क्रमशः एक-एक विषय पर विस्तारपूर्वक व्याख्यान दिया करते थे। आपकी वर्णनशैली स्पष्ट, सबके समझने योग्य और हंसाने वाली हुआ करती थी जिसमें मूर्तिपूजा आदि कुरीतियों और पौराणिक भ्रान्तियों तथा मांस-भक्षण और किरानी कुरानी मतों का खंडन बड़ी प्रबलता से होता था। स्वामी जी के सामने एक कुर्सी रखी जाती थी, जिस पर व्याख्यान के पश्चात् सर्वसाधारण जनता में से जो प्रश्न या शास्त्रार्थ करना चाहे, उसको बैठने की आज्ञा दी जाती थी। यहाँ ईसाई लोगों के अतिरिक्त और किसी से कोई उल्लेखनीय शास्त्रार्थ नहीं हुआ। हाँ, एक-आध बात पूछने या शंकानिवारण के लिए मनुष्य प्रायः आते रहे। आपके निवासस्थान पर भी साधु, पंडित आदि केवल दर्शन के लिए; और कोई शंकानिवारण के लिए आया करता था। आप अच्छे बुरे प्रत्येक व्यक्ति से बड़े ध्यान और प्रेम के साथ बातचीत किया करते थे। आठ पहर के पश्चात् प्रत्येक सायं ५ बजे के लगभग भोजन करते और इन दिनों हुक्का भी पीते थे। आपके साथ दो या तीन पंडित वेद भाष्य लिखने वाले और एक अंग्रेजी पढ़ा लिखा बाबू पत्र-व्यवहार के लिये रहा करता था। नित्यकर्म के अतिरिक्त अपना सारा समय वेदभाष्य आदि वेदप्रचार मे ही व्यतीत करते थे। रात के समय भी बहुत कम सोया करते थे। मैं प्रायः दिन भर उनके निवासस्थान पर रहा करता था।

मास्टर लछमनप्रसाद जो पहले ब्राह्मसमाजी थे, प्रायः वे भी उनके पास बैठते और अपने संशय निवारण किया करते थे। अन्त में उन्होंने अपने समस्त सन्देह निवृत्त करके वैदिकमत स्वीकार कर लिया, और स्वामी जी की उपस्थिति में उनके सामने समाज स्थापित होकर मास्टर जी अधिक श्रद्धालु और योग्य होने के कारण प्रधान नियुक्त हुए और बाबू ज्वालाप्रसाद, हेडक्लर्क-फारेस्ट आफिस, मंत्री नियत हुए। समाज के समस्त सदस्यो की संख्या १० या १२ थी।'

मास्टर लक्ष्मनप्रसाद फिर ब्राह्मसमाजी बनकर भ्रम फैलाने लगे—'यही मास्टर जी सुना है कि कुछ वर्षों से फिर ब्राह्मसमाजी हो गये और लोगो को कुछ का कुछ कहते फिरते हैं। कहीं कहते है कि मैंने स्वामी जी के सामने वेद को ईश्वरीय पुस्तक' नहीं माना था, कहीं कहते है कि स्वामी जी स्वयं भी